मन की एकाग्रता

केन्द्रीय भाव :- आज के अध्येता छात्र के लिये सभी आवश्यक संसाधन एवं ज्ञान के स्रोत उपलब्ध है। पुस्तकालय, इंटरनेट, विद्वान-शिक्षक, छात्रवृत्ति आदि के सहयोग और मार्गदर्शन से छात्र निःसंदेह शिक्षा में आगे बढ़ रहे हैं किन्तु प्रतिभा बिना सभी संसाधन ऐसे हैं जैसे ऊसर खेत में बीज बोना। अतः प्रतिभा का महत्व सर्वोपरि है। इस प्रतिभा के निखार को मनोनिग्रह, स्थितप्रज्ञ, निश्चयात्मिक बुद्धि, एकाग्रता आदि शब्दों द्वारा गीता बहुविध प्रतिपादित करती है। बाह्य संसाधन तो सब को उपलब्ध हो सकते हैं, पर आन्तरिक मन, संयम और इन्द्रिय निग्रह नितांत छात्र सापेक्ष है। अतः गीता के प्रतिमान आचरणीय हैं। आज के छात्र जीवन में इससे अनुशासन निष्पन्न होगा और सृजनशीलता में वृद्धि होगी। प्रस्तुत निबंध मन की एकाग्रता इसी दृष्टि बोध को विस्तारित करता है। इस पाठ का लेखन पं. बालकृष्ण भारद्वाज द्वारा किया गया।

मन की एकाग्रता की समस्या सनातन है। आज के प्रौद्योगिकी युग में जहाँ भौतिक उन्नति की संभावनाएँ अपार है ऐसे में छात्र जब अध्ययन करने बैठता है, तब उसके मन को अनेक तरह के विचार घेरने लगते हैं। वह सोचता है इस अर्थ प्रधान युग में मुझे उत्कृष्ट पद प्राप्ति के लिये एकाग्र मन से पढ़कर परीक्षा में उच्चतम श्रेणी प्राप्त करना आवश्यक है। लेकिन वह जब पढ़ने बैठता है तो क्रिकेट, सिनेमा या मित्र मण्डली की मौज मस्ती के विचार में उसका मन भटकने लगता है। मन का यह विचलन, बुद्धि की एकाग्रता भंगकर देता है। वह घबड़ा कर सोचता है, परीक्षा तिथि पास है, मन उद्विग्न है, कैसे अध्ययन करुं? क्या करुं? व्यर्थ के विचारचक्र से बुद्धि अस्थिर और मन चंचल बना रहता है। वह सोचता है यदि परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो गया तो सब कुछ नष्ट हो जायेगा। पद, प्रतिष्ठा, वैभव कुछ नहीं मिलेगा, जीवन बोझ बन जायेगा, वह बार-बार हताशा से घिर जाता है। अनियंत्रित मन और एकाग्रहीनता उसे चिन्ताओं में डुबा देती है। अर्जुन की यह स्वीकारोक्ति कि 'चंचल मन का निग्रह वायु की गति रोकने के समान दुष्कर है उसे उचित प्रतीत होने लगता है।

ऐसे छात्र की दो समस्याएं हैं। पहली उसका मन भोग और ऐश्वर्य पाने के लिये उसे लुभा रहा है, और दूसरी पढ़ने में उसकी बुद्धि की एकाग्रता का न होना है। बाहर की चकाचौंध उसे अपनी ओर खींचती है और आन्तरिक मन उसे अनेक स्मृतियों और कामनाओं में भटका रहा है। वह बाहर की परिस्थितियों से स्वयं को बचा सकता है, पर आन्तरिक मनश्चक्र की गति अनियन्त्रित वेग से चलती ही रहती है। ऐसी स्थिति में मन का संयम कैसे करें। यम-नियम, आसन, प्राणायाम, आदि कुछ क्षण के लिये मन को एकाग्र कर सकते हैं पर ये सब मन की पूर्ण और स्थायी एकाग्रता कराने में समर्थ नहीं है। इसका पूर्ण उपाय गीता के स्थित प्रज्ञ के विवरण में है। स्थित प्रज्ञ वह है जिसकी बुद्धि अस्थिर चंचल तथा विचलित नहीं है। स्थित प्रज्ञता इन्द्रिय और मन से संयमित बुद्धि का नाम है।

स्थित प्रज्ञ दर्शन में बुद्धि की स्थिरता के लिये आवश्यक है कि मन को विषयों के पास न ले जावें, पर यह तभी संभव है जब मन इन्द्रियों के भोगों में आसक्त न हो, उनसे दूर रहे, मन इन्द्रियों से दूर तभी तक रह सकता है जब उसमें रहने वाली

कामनाएँ नष्ट हो जायें। पर कामनाओं का अभाव तभी संभव है जब व्यक्ति अन्य वस्तुओं के बिना स्वयं संतुष्ट हो। इसे गीता में 'आत्मन्येयात्मना तुष्टः' कहा है अर्थात् व्यक्ति अपनी तुष्टि के लिये अन्य या भिन्न वस्तु की इच्छा नहीं करता। अतः चित्त की एक भी वृत्ति जब तक बहिर्मुखी है जब तक मन अशान्त रहेगा। इन्द्रियों की गुलामी से वह मुक्त नहीं रह सकता। ऐसा मन, बुद्धि को अस्थिर करता है।

समस्या यह है कि यदि इन्द्रियों को विषयों से बलपूर्वक हठ्योग के द्वारा दूर भी कर लें, तो भी विषयों का चिन्तन नहीं छूटता वह अवसर आने पर पुनः विकसित होगा। जैसे, ग्रीष्म ऋतु के ताप से पृथ्वी पर वनस्पतियाँ सूख जाती है, पर वर्षा ऋतु में जल पाकर, फिर पल्लवित हो जाती हैं।

इसी प्रकार विषयों से बलपूर्वक हटाई गयी शुष्क इन्द्रियाँ विषय चिन्तन रूपी जल से फिर विषयों में लिप्त हो जाती हैं। क्योंकि इन्द्रियों की विषय रस की चाह बाह्य दमन से नष्ट नहीं होती है। इसीलिये प्रणायामादि के अभ्यास से मन कुछ समय के लिये विषय शून्य हो जायेगा, किन्तु बाद में वह अवसर पाकर फिर विषयों में डूब जायेगा।

मन दो प्रकार से उत्तेजित होता है - बाहर के विषयों से एवं भीतर की वासनाओं और स्मृतियों से। अतः जब तक वासनाएँ हैं विषय रस का संस्कार नष्ट नहीं किया जा सकता। यद्यपि बाह्य प्राणायामादि कुछ सहायक हैं पर पूरी तरह विषय रस का निस्सारण नहीं करते, तब मन से विषय रस कैसे निवृत्त हो? गीता बताती है 'परं दृष्ट्वा निवर्तते', परं का अर्थ है कि मन को किसी परं अर्थात् परम उच्च लक्ष्य में लगाना जैसे सेवा कार्य के प्रकल्पों में, लोक संग्रह में, राष्ट्र भक्ति में या दीन दरिद्रों की सेवा में। ऐसा करने से मन की विषय आसक्ति नष्ट हो जाती है। इस संदर्भ में छात्रों के लिये अध्ययन ही परम लक्ष्य है।

गीता में परं का अर्थ परमात्मा है इसे परिभाषित करते हुए गीता कहती है कि सब विश्व ईश्वर ही है। वासुदेवः सर्वम्। यह भी कहा है कि मुझ ईश्वर को सब विश्व में व्याप्त जानो और मुझमे संपूर्ण विश्व को समझो। अर्थात् ईश्वर और विश्व अभिन्न हैं। अतः सबके प्रति सेवाभाव रखो यही मन की वासनाओं की शुद्धि का सूत्र गीता देती है। क्या इन्द्रियों के भोगों को नियंत्रण करने से मानसिक कुंठाएँ नहीं उभरेंगी तथा व्यक्ति मानसिक और शारीरिक रोगों से पीड़ित नहीं हो जायेगा। गीता का इस विषय में उत्तर पूर्णतः तर्क संगत है।

यह सत्य है कि जीवन के लिये इन्द्रियों का विषय सेवन आवश्यक है। पर गीता ने बताया है कि इन्द्रियों का विषय सेवन आसक्ति और द्वेष से किया गया नहीं होना चाहिये। इन्द्रियगत विषय भोग को सदैव नियन्त्रित रखना चाहिये। उन्हें स्वच्छन्द और निरंकुश नहीं छोड़ देना चाहिये, अन्यथा व्यवहार में अनेक समस्याएँ आवेगी।

अनियन्त्रित इच्छाएँ समाज में अनाचार पनपाएँगी। लोग कामनाओं से आवेशित होकर निषिद्ध आचरण में प्रवृत्त होवेंगे। अतः इन्द्रियों द्वारा विषयों का सेवन तो हो पर विवेक शून्य आसक्ति न हो। इन्द्रियाँ अपने वश में रहें। उन पर अंकुश रहे अनिवार्य विषयों में इन्द्रियाँ प्रवृत्त हों, पर निषिद्ध वर्जित विषयों में नहीं।

अभ्यास

बोध प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न-

1. छात्रों की क्या समस्या है।
2. स्थित प्रज्ञता कैसे प्राप्त होती है।
3. मन कितने प्रकार से उत्तेजित होता है।
4. गीता में 'परं' का अर्थ क्या है।

लघु उत्तरीय प्रश्न-

1. अर्जुन की स्वीकारोक्ति को लिखिए।
2. मन को एकाग्र करने के बाह्य साधना क्या है।
3. छात्र की समस्याएं कौन-कौन सी है।
4. इन्द्रियों का कार्य क्या होना चाहिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न-

1. संयम को समझाइये।
2. परं उच्च लक्ष्य का तात्पर्य क्या है।

भाषा-अध्ययन

1. विलोम शब्द लिखिये -

   एकाग्रता, राग, अनाचार

दो-दो पर्यायवाची शब्द लिखिये -

चंचल, कामनाएँ, निग्रह

उपसर्ग का नाम उल्लेख कीजिए -

विचलना, निग्रह, संतुष्ट, प्रज्ञ, परिभाषित, नियन्त्रित

समास विग्रह कर नाम बातइये

अशक्य, बहिर्मुख, लोक संग्रह

योग्यता - विस्तार

1. स्थितप्रज्ञ के द्वितीयाध्याय के 18 श्लोकों का अर्थ विस्तार से समझाइए।
2. गीता पर लिखी गई पुस्तकों का अध्ययन कीजिए।
3. अवसाद, जीवन मूल्य एवं सामाजिक समरसता पर निबंध लिखिए।
4. मन की एकाग्रता विषयक लेखों और विचारों का संग्रह कीजिए।
5. अपने अशांत मन को संतुलित कर जिन महापुरुषों ने कीर्ति पाई उनका वृत्त संकलित कीजिए।
6. यदि आप अर्जुन होते तो कृष्ण से क्या-क्या प्रश्न पूछते।

शब्दार्थ

आसक्ति=अति-लगाव

मन= संकल्प, विकल्प करने वाला

कामना=मन में रहने वाली इच्छाएँ

राग=विषयों के प्रति आसक्ति

निषिद्ध =धर्मशास्त्र द्वारा मना किया गया

सनातन = प्राचीन

स्वीकारोक्ती = स्वीकार करने योग्य

दुष्कर = कठिन

वेग = गति

निस्सारण = निकलना

विषय=शब्द स्पर्श, रूप, रस और गन्ध

बुद्धि=निश्चय करने वाली

वासनाएँ=अनेक जन्मों की इच्छायें जो मन में बसी हुई है,

विधेय=शास्त्रीय विधान के योग

नियन्त्रित=काबू में हुआ।

उद्विग्न = व्याकुल

निग्रह = रोकना

मनश्चक्र = मन की गति

हठयोग = एक प्रकार का योग

प्रज्ञ = जानकार

***